इकाई 2 शहरी बस्तियाँ

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- शहरी केन्द्रों के उत्थान के कारणों पर प्रकाश डाल सकेंगे,
- शहरीकरण के इतिहास के विभिन्न चरणों को व्याख्यायित कर सकेंगे,
- शहरी केन्द्रों की आधारभूत प्रवृत्तियों को रेखांकित कर सकेंगे,
- गुप्त काल के बाद हुए शहरी विकास के सामान्य प्रतिरूप की चर्चा कर सकेंगे,
- शहरी बस्तियों की क्षेत्रीय विभिन्नताओं को पहचान सकेंगे, और
- विभिन्न प्रकार के शहरों का वर्णन कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

गुप्त काल के बाद की शताब्दियों के सामाजिक-आर्थिक इतिहास को समझने के लिए शहरी बस्तियों के विकास को समझना जरूरी है। इसकी चर्चा कृषि अर्थव्यवस्था के पूरक तत्व के रूप में की जानी चाहिए। आधुनिक इतिहास लेखन में भारतीय सामन्तवाद के ढाँचे का जिक्र करते समय शहरी बस्तियों के उदय पर भी खासकर प्रकाश डाला जा रहा है। इस तथा आगे की दो इकाइयों में इस प्रकार की गतिविधियों से जुड़ी समस्याओं पर विचार किया जाएगा।

2.2 शहरी केन्द्रों का तात्पर्य और ढांचा

शहरी केन्द्रों का अध्ययन सामाजिक-आर्थिक इतिहास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। आरंभिक मध्यकालीन भारत के शहरी केन्द्रों का अध्ययन आमतौर पर दो तरीको से हुआ है :

i) आर्थिक इतिहास के हिस्से के रूप में, अर्थात् व्यापार, वाणिज्य और शिल्प उत्पादन आदि का इतिहास,

ii) प्रशासनिक या राजनीतिक इतिहास के रूप में, अर्थात राजधानियों, प्रशासनिक केन्द्रों,

प्रमुख और गौण शाही परिवारों के केन्द्रों और किलाबंद शहरों के रूप में।

इस प्रकार शहरी केन्द्रों के अध्ययन के क्रम में आमतौर पर शहरी केन्द्रों के प्रकार पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इसी के तहत शहरों और नगरों को बाजार, व्यापार या वाणिज्यिक केन्द्रों, बंदरगाहों, राजनीतिक और प्रशासनिक केन्द्रों, धार्मिक केन्द्रों आदि श्रेणियों में विभक्त किया गया है। इसके बावजूद शहरों के उदय के कारणों को व्याख्यायित करने पर विशेष जोर नहीं दिया गया है। दूसरे शब्दों में शहरों के ढाँचे पर तो ध्यान दिया गया है, पर इसके अर्थ और तात्पर्य को समझने की कोशिश नहीं की गयी। शहरी केन्द्रों के ढाँचे और अर्थ को एक साथ समझने और उनके स्वरूप और श्रेणियों को पहचानने के लिए शहरी केन्द्रों के विकास की प्रक्रिया का अध्ययन बृहद् सामाजिक-आर्थिक बदलाव के हिस्से के रूप में किया जाना चाहिए।

विभिन्न चरण और परिभाषा

इस समय हम इस सवाल से जूझने जा रहे हैं कि शहरी केन्द्रों को हम कैसे परिभाषित करें और इनकी अनिवार्य विशेषताएँ क्या हैं? तुर्कों के आगमन के पहले भारतीय उप-महाद्वीप में शहरी विकास कम से कम तीन चरणों से गुजर चुका था :

1) कांस्य युग में हडप्पा सभ्यता (चौथी-दूसरी सहस्राब्दि ई.पू.)
2) लौह युग के आरंभिक ऐतिहासिक शहरी केन्द्र (छठी शताब्दी ई. पू. के आसपास से लेकर तीसरी शताब्दी ई. के अंत तक)
3) आरंभिक मध्यकालीन शहर (लगभग आठवीं-नवीं शताब्दी से लेकर बारहवीं शताब्दी तक)।

मोर्डन चाइल्ड ने "शहरी क्रांति" की अपनी धारणा के तहत शहरी केन्द्रों को परिभाषित करने का आरंभिक प्रयत्न किया। उन्होंने शहरी केन्द्र की विशेषताओं को रेखांकित किया। इस क्रम में उन्होंने स्मारकों, घनी आबादी वाली बस्तियों, खाद्यान्न उत्पादन में सीधे तौर से न जुड़े लोगों (शासक, शिल्पी और व्यापारी) और कला, विज्ञान और लेखन के विकास आदि का उल्लेख शहरी केंद्रों की विशेषताओं के रूप में किया। इसके अलावा, चाइल्ड ने शहरी केन्द्रों के अस्तित्व के लिए शिल्प उद्योग और अधिशेष कृषि उत्पादन पर विशेष बल दिया। अधिशेष कृषि उत्पादन से ही शहर में रह रहे खाद्यान्न उत्पादन से सीधे तौर पर न जुड़े व्यक्तियों का पालन-पोषण होता था। ऊपर कांस्य युग के नगरो के संदर्भ में जिन विशेषताओं का उल्लेख किया गया, वे सभी विशेषताएं लौह युग में देखने को नहीं मिलती हैं। ऐसे शहरी केन्द्रों, जहां जनसंख्या काफी कम थी और घर मिट्टी के बने थे की बहुतायत थी।।

हालांकि किसी भी शहर के अस्तित्व के लिए अधिशेष खाद्यान्न उत्पादन अनिवार्य है, पर केवल गैर कृषक बस्तियों को शहर की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। आरंभिक मध्यकालीन साहित्यिक ग्रंथों में दीवार और खाई से घिरे शहरों का उल्लेख हुआ है। इन ग्रंथों के अनुसार शहरों में हर वर्ग के लोग रहते थे। इनमें व्यापारियों और शिल्पियों की श्रेणियों के लिए विभिन्न कानूनों और रिवाजों की भी व्यवस्था थी।

सम्पूर्ण भारतीय उप-महाद्वीप में अब तक 140 स्थलों पर खुदाई से जो आंकड़े सामने आए हैं उनके अध्ययन (आर.एस. शर्मा, अर्बन डीके इन इंडिया, लगभग 300-1000 ई.) से निम्नलिखित तथ्यों का पता चलता है :

- भौतिक जीवन का स्तर और व्यवसाय का स्वरूप, और
- शहरी केन्द्रों का अध्ययन कृषि अधिशेष पर निर्भर परजीवी के रूप में न करके ग्रामीण प्रभाव क्षेत्र से अंतरंग रूप में जुड़े केन्द्रों के रूप में की जाने की आवश्यकता।

आरंभिक मध्यकालीन शहरी बस्तियों की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख इस प्रकार किया गया है :

i) क्षेत्रफल और आबादी के अनुसार बस्तियों का आकार,
ii) पानी के स्रोतों की उपलब्धता – नदी का किनारा, तालाब, कुंआ आदि।
iii) शिल्पकारों की गतिविधियों का प्रतिनिधित्व करने वाले शिल्प-तथ्यों की उपस्थिति या अनुपस्थिति, मसलन कुल्हाड़ी, छेनी, हल, हँसिया, कुदाली, चूल्हा, भट्ठी, रंगरेज की हौज, मनका, मुहर, गहने, मिट्टी के खिलौने आदि बनाने के सांचे।

v) सिक्के के सांचों के प्रमाणों से ऐसे शहरों का पता चलता है जहां सिक्के ढाले जाते थे। धातु की मुद्रा की प्राप्ति और शिल्पकारों तथा व्यापारियों की उपस्थिति से ऐसे स्थलों का संकेत मिलता है, जो शहरी विशेषताओं से युक्त थे।

v) विलास की वस्तुओं जैसे बहुमूल्य और अर्धबहुमूल्य पत्थर, शीशे के सामान, हाथी दाँत से बनी वस्तुएं, परिष्कृत मिट्टी के बर्तन की मौजूदगी। इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि प्राचीन शहरों मे प्राप्त ये विलास-वस्तुएं आरंभिक मध्यकाल के उच्च ग्रामीण वर्ग की जरूरत बन गयी हो।

vi) गंगा के मैदान इलाके की आर्द्र और वर्षा से युक्त जलवायु को देखते हुए पक्की ईंटों (मात्र जली हुई ईंटों मे नहीं) से बड़े पैमाने पर बनी इमारतों का अपना महत्व है। हालांकि मध्य एशिया में बहुत से शहरों में मिट्टी की इमारतें भी मिली हैं।

vii) गलियाँ, दुकानें, नालियां और किलेबंदी भी शहरी बस्तियों की विशेषताओं पर प्रकाश डालती हैं। दक्खन के कई ऐतिहासिक स्थलों से (जैसे आंध्र प्रदेश का धूलीकट्टा) भंडार और खाद्यान्न भंडार प्राप्त हुए हैं। वस्तुतः इस प्रकार के भंडारगृह अधिशेष खाद्यान्न रखने के काम में लाये जाते थे, इनका उपयोग शहरी लोगों की खाद्यान्न संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए किया जाता था।

बोध प्रश्न 1

1) तुर्कों के आने से पहले भारत में शहरी विकास के तीन प्रमुख चरणों का उल्लेख करें।

....

....

....

....

....

2) गोर्डन चाइल्ड के अनुसार शहर की प्रमुख विशेषताएं क्या होती हैं?

....

....

....

....

....

3) आरंभिक मध्यकालीन भारत के शहरी केंद्रों की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख करें।

....

....

....

....

....

2.3 सामान्य प्रतिरूप

गुप्तकाल के बाद की शताब्दियों में भूमि-अनुदान पर आधारित सामाजिक-आर्थिक संरचना का जन्म हुआ। आठवीं और बारहवीं शताब्दियों के बीच भूमि अनुदानों के माध्यम से (इकाई 1 देखिए) कृषि अर्थव्यवस्था का शनैः शनैः विकास हुआ, इस विकास का शहरों के उदय पर भी असर पड़ा। हालांकि पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में शहरी केन्द्रों के पुनरुत्थान की सामान्य प्रवृत्ति विकसित हुई, पर इसमें प्रादेशिक विभिन्नता भी देखने को मिलती है। यह विभिन्नताएं इन केन्द्रों के स्वरूप, श्रेणियों तथा पदानुक्रम में निहित थीं। इनका कारण

आर्थिक शक्तियाँ, पारिस्थितिकी और सांस्कृतिक विभिन्नता और राजनीतिक संगठन का स्वरूप थे। अतः घटनाओं को सही परिप्रेक्ष्य में देखने के लिए शहरी केन्द्रों का क्षेत्रीय अध्ययन आवश्यक है। अभी तक राजस्थान, मध्य भारत और दक्षिण भारत जैसे क्षेत्रों की क्षेत्रीय विशेषताओं का ही अध्ययन किया जा सका है।

2.4 क्षेत्रीय विभिन्नता और प्रकार

भारत जैसे विशाल देश में शहरों के उत्थान और विकास की प्रक्रिया में विभिन्नता का होना स्वाभाविक है। इस भाग में हम कुछ प्रमुख विभिन्नताओं की चर्चा करने जा रहे हैं।

2.4.1 ग्रामीण केन्द्रों का शहरी केन्द्रों में रूपांतरण

ब्रह्मदेय और देवदान आरंभिक मध्यकाल के अध्ययन का प्रमुख स्रोत माने जाते हैं। ये शहरी विकास के प्रमुख केन्द्र के रूप में उभरे। कुछ प्रमुख कृषि उत्पादन वाले इलाकों में ब्राह्मण और मंदिर बस्तियां एक साथ मिल गये। ऐसे केन्द्र जो आरम्भ में ग्रामीण थे, कुछ विशेष और खास उत्पादित वस्तुओं के व्यापार के प्रमुख बिन्दु बन गये। आठवीं-नवीं शताब्दी से ऐसे शहरी विकास के क्षेत्र ज्यादातर दक्षिण भारत में पाये गये हैं। नवीं से लेकर बारहवीं शताब्दी के बीच कुंबकोणम (कुदमुक्कु पलैयरइ) का चोल शहर कृषि बस्तियों से बहु-मंदिर शहर केंद्र के रूप में विकसित हुआ। कांचिपुरम इस प्रकार के शहरी क्षेत्र का दूसरा प्रमुख उदाहरण है। चोलों की राजधानी होने के कारण कुंबकोणम का राजनीतिक महत्व था, यह पहलू इसके शहर के रूप में विकसित होने में सहायक सिद्ध हुआ। कांचिपुरम इसलिए बहुत महत्वपूर्ण था क्योंकि वह दक्षिण भारत का एक बड़ा शिल्प केंद्र (कपड़ा उत्पादन) था।

2.4.2 बाजार केन्द्र, व्यापार तंत्र और चलता-फिरता व्यापार

आरंभिक मध्यकाल की शताब्दियों में अपेक्षित रूप से कम विस्तार वाले शहरी केन्द्रों का उदय बाजार व्यापार केन्द्रों (मेले आदि) के रूप में हुआ, जो मूलतः विनिमय-केन्द्र थे। इन केन्द्रों का ग्रामीण प्रभाव क्षत्र से लेकर क्षेत्रीय वाणिज्यिक प्रभाव क्षेत्र से संबंध था। इनमें से कुछ केन्द्रों का कार्य उनकी क्षेत्रीय सीमाओं से बाहर भी फैला हुआ था। कुल मिलाकर आरंभिक मध्यकालीन शहरी केन्द्रों को उनके क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य में देखना उचित होगा। इसे बेहतर ढंग से समझने के लिए दक्षिण भारत का नगरम (तमिलनाडु में इनसे संबंधित पर्याप्त प्रणाम उपलब्ध हैं) और कुछ हम तक कर्नाटक में नकहारा तथा आंध्र प्रदेश में नगरमु भी उल्लेखनीय हैं। नगरम कृषि या कृषक क्षेत्र नाडु या कुर्रम का बाजार था। इनमें से कुछ केन्द्रों का उदय नाडु के व्यापारिक आदान-प्रदान की जरूरत को पूरा करने के लिए हुआ था। इनमें से बहुत से केन्द्र ऐसे थे जिनकी स्थापना शासक वर्ग या शाही मंजरी के तहत हुई थी। इनमें से कई केन्द्रों का नाम शासकों के नाम पर रखा गया। यह विशेषता दक्षिण भारत के सभी क्षेत्रों में सामान्य रूप में पायी जाती है। इन केन्द्रों के नामों में पुर या पट्टन प्रत्यय जुड़ा रहता था।

नगरम महत्वपूर्ण व्यापार मार्गों और व्यापार मार्गों के मिलन बिन्दु पर स्थित थे। इनका विकास विशेष व्यापारिक और वाणिज्यिक केन्द्रों के रूप में हुआ। इन केन्द्रों का बाहर और आंतरिक क्षेत्रों के साथ व्यापर होता था और भ्रमणशील व्यापारी संगठनों और शाही बंदरगाहों के माध्यम से विदेशी व्यापार भी संचालित होता था। दसवीं और बारहवीं शताब्दी के बीच सम्पूर्ण प्रायद्वीपीय भारत में यह प्रकृति समानरूप से विकसित हुई। इन शताब्दियों में दक्षिण भारत व्यापार के माध्यम से दक्षिण एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया के देशों, और चीन तथा अरब देशों के साथ जुड़ा। (इकाई 3 और 4 भी देखें) नगरम बंदरगाह और राजनीतिक तथा प्रशासनिक केन्द्रों तथा भीतरी क्षेत्र में स्थित शिल्प केन्द्रों के बीच कड़ी का काम करते थे।

कर्नाटक में नगरम का उदय व्यापारिक आदान-प्रदान के केन्द्रों के रूप में हुआ, कृषि इलाकों के लिए नियमित बाजार के रूप में इनका महत्व कम था। पर सभी नगरमों की एक समान विशेषता यह थी कि वे किसी कृषि प्रभाव क्षेत्र से सम्बद्ध थे। इन इलाकों से नगरम में रहने वाले लोगों के लिए खाद्यान्न की आपूर्ति होती थी। इन केन्द्रों में स्थापित बाजार पर नगरम सभा का नियंत्रण होता था, जिसका प्रधान नट्टनस्वामी के नाम से जाना जाता था।

राजस्थान और मध्य प्रदेश के पश्चिमी हिस्सों में ऐसे ही व्यापार केन्द्रों और बाजारों का उदय हुआ। ग्रामीण बस्तियों के इर्द गिर्द ऐसे केन्द्र थे जहां विनिमय कृषि उत्पादन के माध्यम से होता था। राजस्थान में ये केन्द्र कई प्रकार के व्यापार के मिलन बिन्दु थे जिसके कारण कुछ हद तक श्रेणीबद्ध संगठन उभरा। ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी में जाने-माने व्यापारिक परिवारों के विकास से इस तंत्र का और भी विस्तार हुआ। इनका नाम उनके मूल निवास पर आधारित था, जैसे ओसावला (ओसिया), श्रीमालि (भिनमल), पल्लिवल और खंडेलवाल आदि। इन व्यापारिक परिवारों के विकास से संसाधन आधार, संसाधनों के आने के मुख्य रास्ते और आदान-प्रदान के केन्द्र एक दूसरे से गहरे रूप से जुड़ गये। राजस्थान, गुजरात, मध्य भारत और गंगा की घाटी के बीच; मुख्य व्यापारिक कड़ी के रूप में विकसित हुआ। पालि जैसे शहर कड़ी का काम करते थे, ये समुद्रतटीय शहरों, जैसे द्वारका और भृगुकच्छ (भडौंच), को मध्य और उत्तर भारत से जोड़ते थे। गुजरात जहाँ जैन व्यापारियों का बोलबाला था, पश्चिमी भारत का प्रमुख व्यापारिक केन्द्र था। यहाँ प्रारंभिक ऐतिहासक काल के बंदरगाह जैसे– भृगुकच्छ (भडौंच) आरंभिक मध्यकाल में भी व्यापारिक केन्द्र के रूप में फले-फूले। राजस्थान का एक महत्वपूर्ण शहर बयाना, विभिन्न व्यापारिक मार्गों का संगम स्थल था। व्यापार की वस्तुओं में शुरू में कृषि उत्पादन, प्रमुख थे (दुग्ध उत्पादन जिसमें शामिल था) पर बाद में बहुमूल्य वस्तुएं जैसे घोड़े, हाथी, सींग वाले जानवर और आभूषण भी व्यापार की वस्तुओं में शामिल हो गए।

कर्नाटक में विवेच्यकाल के दौरान शहरों की संख्या में बढ़ोत्तरी की प्रमुख विशेषता यह थी कि बीजापुर, धारवाड़, बेलगाम और शिमोगा में वाणिज्य केन्द्रों का संकेन्द्रण हुआ। आरंभिक ऐतिहासिक काल से ही भारतीय प्रायद्वीप के पश्चिमी तट का अरब, फारस की खाड़ी और उसके आगे के देशों के साथ व्यापारिक संबंध रहा था। दसवीं और बारहवीं शताब्दियों के बीच में थाणा, गोआ, भटकल, करबार, होनेवर और मंगलोर जैसे बंदरगाहों का लंबी दूरी के व्यापार के पुनर्स्थापित होने के दौरान विकास हुआ। यहां पर समुद्री जहाजरानी और तटीय नौ परिवहन के प्रमाण भी उपलब्ध हैं। आश्चर्य की बात यह है कि नगदी व्यवस्था का व्यापक विस्तार न होने के बावजूद इस प्रकार की वाणिज्यिक गतिविधियां जारी थीं (इकाई 3 भी देखें)। कोंकण तट (शिलहारों के अधीन) पर बाजार और उसके तंत्र के उदय का कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

कर्नाटक, आंध्र और तमिलनाडु के बीच व्यापक व्यापार तंत्र फैला हुआ था। बेलगाम (कर्नाटक), नालगोंडा जिले में पेरुरु (आंध्र प्रदेश) और विशाखापट्टनम और घंटशाला जैसे तटीय शहरों में तमिल, तेलुगु और कन्नड़ व्यापारियों की उपस्थिति इसका प्रमाण है। आंध्र तट दक्षिणी पूर्वी व्यापार का मुख्य द्वार बन गया, जिसके प्रमुख बंदरगाह मोटुपल्ली, विशाखापट्टनम और घंटशाला थे। आंध्र प्रदेश में नेल्लोर, द्रावकशर्मा, त्रिपुरंतकम और अनुमकोंडा अन्तक्षेत्रीय व्यापार के प्रमुख बाजार थे। कावेरी के उत्तरी और दक्षिणी तट पर कर्नाटक और तमिलनाडु के बीच तलक्कड और मुडिकोंडन जैसे कई आदान-प्रदान के बिन्दु थे।

केरल का पश्चिमी और विदेशी व्यापारियों से संबध स्थापित हुआ। विशेष शाही फरमानों के द्वारा इन विदेशी व्यापारियों (यहूदियों, इसाइयों और अरबी लोगों) को व्यापारिक शहर प्रदान किए गए। कोलिकुड्डू और कौल्लम आदि तटीय शहर दक्षिण एशियाई व्यापार के केन्द्र बने। अंजुवन जैसे व्यापारिक समुदायों और अरब के घोड़े व्यापारियों के कारण कर्नाटक और केरल के तटीय शहरों का महत्व बढ़ गया। कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु के बुनकर केन्द्र अंतक्षेत्रीय व्यापार के फलस्वरूप उभरे।

नगरीकरण के आरंभिक ऐतिहासिक चरण के कुछ शिल्प और वाणिज्य केन्द्र आरंभिक मध्यकाल तक बने रहे। पुनर्नगरीकरण की इस प्रक्रिया में ये पुराने केन्द्र मंदिर जैसे नये सामाजिक-आर्थिक संस्थानों से जुड़े। उत्तर में काशी (वाराणसी) और दक्षिण में कांचीपुरम (मद्रास के निकट) इस प्रकार की प्रक्रिया के प्रमुख उदाहरण हैं।

2.4.3 पवित्र/तीर्थस्थल

भक्ति आंदोलन के फैलाव के कारण आरंभिक मध्यकाल को दौरान तीर्थस्थलों (धार्मिक-केन्द्रों) का महत्व बढ़ा। ब्राह्मण उपासना पद्धति और लोक विश्वास के बीच संबंध स्थापित हुआ और संकीर्ण विश्वासों से निकालकर इस मिलन से विभिन्न क्षेत्रों में

तीर्थस्थलों की स्थापना हुई। लोक-विश्वास के कई प्राचीन केन्द्र, परिणामस्वरूप तीर्थस्थल के रूप में विकसित हुए। इनमें से कुछ स्थलों का ब्राह्मण धर्म से पुराना संबंध था और कुछ स्थलों का गैर-ब्राह्मण धर्मों से संबंध था।

कभी-कभी यह तीर्थस्थल तंत्र किसी सांस्कृतिक क्षेत्र विशेष तक सीमित था जिसके अंतर्गत किसी विश्वास केन्द्र का पवित्र स्वरूप उभरता था। पवित्र तीर्थस्थल के रूप में विकसित इन विश्वास केन्द्रों में विभिन्न क्षेत्रों से लोग पूजा-अर्चना के लिए आया करते थे। उपर्युक्त वर्णित दोनों प्रकार के तीर्थस्थलों की शहरी विशेषताएं सामने आईं। तीर्थ-यात्रियों के आने-जाने, व्यापार और शाही संरक्षण के कारण यह संभव हुआ। अब इतिहासकार तीर्थस्थलों के विकास में उभरते हुए बाजार की भूमिका के महत्व को स्वीकार करने लगे हैं।

राजस्थान में अजमेर के निकट पुष्कर वैष्णव सम्प्रदाय का प्रमुख क्षेत्रीय तीर्थस्थल था। अपनी प्राचीनता और पवित्र ब्राह्मण केन्द्र होने के कारण काशी (बनारस) अखिल भारतीय केन्द्र के रूम में सामने आया। दक्षिण भारत में श्रीरंगम (वैष्णव), चिदंबरम (शैव) और मदुरई (शैव) आदि क्षेत्रीय तीर्थस्थल के रूप में विकसित हुए। कांचीपुरम अखिल भारतीय तीर्थ तंत्र का एक हिस्सा था।

कर्नाटक में मेलकोटे और आंध्र प्रदेश में आलमपुर, द्राकशर्मा और सिमहचलम क्षेत्रीय पवित्र स्थल थे। आरंभ में तिरुपति भी तमिल वैष्णवों का एक महत्वपूर्ण पवित्र स्थल था पर विजयनगर साम्राज्य के काल में इसने अखिल भारतीय स्वरूप ग्रहण किया।

गुजरात और राजस्थान में जैन धर्म के तीर्थस्थल विकसित हुए। व्यापारियों के और शाही संरक्षण के फलस्वरूप ओसिया, माउंट आबू, पलिटना आदि स्थानों पर प्रचुर मात्रा में जैन मंदिरों का निर्माण हुआ।

दक्षिण भारत के पवित्र स्थलों में बने मंदिरों की संरचना को ध्यान से देखने पर नगरीकरण विकास की प्रक्रिया के दो चरणों का पता चलता है :

- एक ही बड़े मंदिर के चारों ओर हुआ शहरीकरण जैसे श्रीरंगम, मदुरई, तिरुवन्नामलई (तमिलनाडु), मेलकोटे (कर्नाटक) क्षेत्रशर्मा और सिमहाचलम (आंध्र प्रदेश)
- विभिन्न धर्मों जैसे शैव, वैष्णव, शक्ति आदि के मन्दिरों के चारों ओर हुआ शहरीकरण।

आरंभिक मध्यकालीन नगरीकरण को (खासकर, दक्षिण भारत के संदर्भ में) मंदिर नगरीकरण की संज्ञा दी जाती है। इन पवित्र केंद्रों ने क्षेत्र विशेष के वाणिज्य को प्रोत्साहित करने के लिए कड़ी के रूम में काम किया, क्योंकि क्षेत्र विशेष से संबंद्ध मंदिर या मठ ही बहुमूल्य वस्तुओं के सबसे बड़े उपभोक्ता थे

2.4.4 राजसी केन्द्र या राजधानियां

आरंभिक मध्यकालीन भारत में शाही केन्द्रों और शाही परिवारों के सत्ता केन्द्रों का विकास शहरी केन्द्रों के रूप में हुआ। इनमें से कुछ सत्ता केन्द्र आरंभिक ऐतिहासिक काल से अस्तित्व में थे, मसलन उत्तरी भारत के जनपद और दक्षिण भारत की परम्परागत राजनीतिक व्यवस्थाएं। शाही परिवार अपने लिए बंदरगाहों का निर्माण करवाते थे, जो उनके राज्य का मुख्य प्रवेश बंदरगाह होता था और यह अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य से भी उन्हें जोड़ता था। इस प्रकार, शाही केन्द्रों की वाणिज्यिक जरूरतों के फलस्वरूप नये व्यापार और संचार संबंध स्थापित हुए और शाही केन्द्र तथा कृषीय प्रभाव क्षेत्र के बीच संबंध प्रगाढ़ हुआ। विंध्य से दक्षिण के क्षेत्रों में, जहां आठवीं शताब्दी ई. में ब्राह्मण राज्यों की स्थापना हुई थी, इस प्रकार के शाही केन्द्रों के उदय के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध हैं। इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :

- उत्तरी कर्नाटक और आंध्र में चालुक्यों के वातापी और वेंगी शहर।
- पल्लवों का कांचीपुरम और उनका बंदरगाह मामल्लपुरम (महाबलिपुरम)
- पांड्यों की मदुरई और उनका बंदरगाह कोरकई
- चोलों का तंजावुर और उनका बंदरगाह नागपट्टिनम
- पश्चिमी चालुक्यों का कल्याण, होयसलो का द्वारसमद और

• काकातियों का वारंगल और उनका बंदरगाह मोटुपल्लि

दक्षिण भारत में वारंगल किलाबंद शाही शहर था। पर दक्षिण भारत के लिए यह अपवाद था।

उत्तर भारत में शाही केन्द्रों के उदाहरण :

- गुर्जर प्रतिहारों की राजधानी कान्यकुब्ज (कन्नौज)
- चंदेलों का खजुराहो
- परमारों का धार, और
- सोलंकियों की वल्लभी

राजस्थान में शक्तिशाली, गुर्जर प्रतिहारों, चौहानों और परमारों के शासनकाल में कई शहरों का उदय हुआ। इनमें से अधिकांश केन्द्र किलेबंद थे, या पहाड़ी किले (गढ़किला या दुर्ग) थे। राजस्थान के दुर्ग शहर निम्नलिखित थे :

- गुहिलों के अधीन नागरा और नागदा
- गुर्जर-प्रतिहारों के अधीन बयाना, हनुमानगढ और चित्तौड़, और
- चौहानों के अधीन मंदोर, रनथमभोर, सकमभरी और अजमेर

विभिन्न स्रोतों के आधार पर, चौहान राज्य के 131 स्थलों का पता चला है, इनमें से अधिकांश शहर प्रतीत होते हैं। परमारों के अधीन मालवा राज्य के करीब दो दर्जन शहरों का पता चला है। गुजरात चालुक्यों के अधीन था। उनके शासनकाल में वहां अनेक बंदरगाह-शहर थे। ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्वी भारत में शहरों की संख्या ज्यादा नहीं थी। पर पालों के नौ विजय स्थल (जयस्कंधवार) (पाटलिपुत्र, मुदगगिरी, रमावती, वट परवटक, विलासपुर, कपिलवस्तु, सहसगंद, कंचनपुर और कन्नौज) शहर हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त उत्तरी और पूर्वी बंगाल में सेनों की चार राजधानियां थीं, लखनौती, नादिया, विजयपुर और विक्रमपुर। चंदेलों के अभिलेखों में इक्कीस स्कंधवारों की चर्चा है। पालों के बीस और चंदेल शासकों के चौबीस किले थे। कभी-कभी कुछ महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्रों और बाजारों को सामंती परिवारों को सौंप दिया जाता था। मसलन कर्नाटक, मध्य प्रदेश और राजस्थान में इस प्रकार के गौण राजनीतिक केन्द्रों की बहुलता थी।

बोध प्रश्न 2

1) ग्रामीण केन्द्रों के शहरी केन्द्रों में रूपान्तरण के कारणों का उल्लेख करें।

....

....

....

....

....

2) व्यापारिक गतिविधियों से नगरों के विकास में किस प्रकार सहायता मिली?

....

....

....

....

....

....

3) क्या नगरीकरण की प्रक्रिया में धार्मिक केन्द्रों की कोई भूमिका थी?

....

....

....

....

....

4) "प्रशासनिक केन्द्रों का शहरी स्वरूप" इस कथन को आधार बनाकर पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

2.5 सारांश

गुप्तकाल के बाद की शताब्दियों में जो भूमि-अनुदान का सिलसिला शुरू हुआ, उसका प्रभाव नयी कृषि अर्थव्यवस्था तक ही सीमित नहीं रहा। गुप्त वंश के शासन काल के आरंभ होने की कुछ शताब्दियों के बाद तक जो शहरी बस्तियां उजड़ रही थीं, उन्हें एक नयी जिन्दगी मिली। व्यापार के पुनरुत्थान, नये बाजारों की स्थापना, राजनीतिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण और धार्मिक संगठनों की आर्थिक शक्ति के दृढ़ीकरण आदि कारणों से भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों में काफी संख्या में नगरों का उदय हुआ। इन शहरों के उदय के कारणों के अपेक्षित महत्व में थोड़ी बहुत विभिन्नताएं नज़र आती हैं।

2.6 शब्दावली

कुर्रम : कभी यह नाडु (नीचे देखें) के समकक्ष और कभी नाडु का एक हिस्सा होता था

तीर्थ : पवित्र स्थल

नगरम : बाजार शहरों की एक प्रकार की व्यापारी-सभा जो कि अनेक वाणिज्यिक हितों की देखभाल करती थी।

नाडु : जिला या उप-मंडल, एक प्रकार की स्थानीय सभा, जो स्थानीय मंडल के नागरिक मामलों की देखभाल करती थी।

स्कंधवार : सैनिक पड़ाव, चलती फिरती राजधानी।

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखें भाग 2.2, शीर्षक विभिन्न चरण तथा परिभाषा के अंतर्गत किया गया विवरण पढ़ें।
2) इस उत्तर में बड़ी बस्तियों, घनी जनसंख्या, शिल्प और वाणिज्य से जुड़े लोगों की चर्चा आदि का उल्लेख करना है। (देखें भाग 2.2)
3) भाग 2.2 में इन सात विशेषताओं का उल्लेख किया गया है। कृपया उन्हें पढ़ें और संक्षेप में पाँच का उल्लेख करें।

बोध प्रश्न 2

1) कुछ मामलों में ग्रामीण केन्द्र वे बिन्दु थे जिनका रूपांतरण शहरी केन्द्रों में हुआ। कई

मामलों में ग्रामीण केन्द्र व्यापारिक आदान-प्रदान के स्थल बने और धीरे-धीरे उनका शहरीकरण हो गया (देखें उपभाग 2.4.1)

2) इसका उत्तर लिखते समय निम्न का उल्लेख करना है जैसे किसी स्थान का व्यापारिक मार्ग पर बसा होना, विभिन्न मार्गों तथा बाजार का, क्षेत्रीय या अन्तरक्षेत्रीय तटीय व्यापार के लिए संबंध (देखें उपभाग 2.4.2)

3) बहुत से धर्म-स्थलों का विकास शहर के रूप में हुआ। यहां श्रद्धालु बड़ी संख्या में आते थे और इस कारण बाजार आदि विकसित हुए। (देखें उपभाग 2.4.3)

4) इस उत्तर में इस बात का उल्लेख करना है कि किस प्रकार प्रशासनिक केन्द्र या सत्ता केन्द्र शहरों में विकसित हुए (देखें उपभाग 2.4.4)।